RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015–17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 76, अंक : 10 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 9 जून, 2019

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–76, अंक : 10, 6–9 जून 2019 तदनुसार 26 ज्येष्ठ, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

दुःखियों की सेवा करने वाले की सभी प्रशंसा करते हैं

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

अनु त्वाहिघ्ने अध देव देवा मदन्विश्वे कवितमं कवीनाम्।
करो यत्र वरिवो बाधिताय दिवे जनाय तन्वे गृणानः।।

–ऋ० ६।१८।१४

शब्दार्थ–अध = अब, हे **देव** = देव! दिव्य गुणयुक्त! **अहिघ्ने** = पापनाश के निमित्त **विश्वे** = सम्पूर्ण **देवाः** = देव, दिव्य गुणसम्पन्न जन **त्वा** = तुझ **कवीनाम्** = कवियों में **कवितमम्** = सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी के **अनु** = अनुकूल **मदन्** = आनन्दित हो रहे हैं, **यत्र** = जिस काल में तू **तन्वे** = शरीर के लिए **गृणानः** = पुकारा जाता हुआ **दिवे** = सुप्त, प्रमादग्रस्त **बाधिताय** = पीड़ित **जनाय** = जन के लिए [की] **वरिवः** = सेवा **करः** = करता है।

व्याख्या–ज्ञानी कौन ? जिसे पाप से घोर घृणा हो। वह महाज्ञानी=महाकवि=कविराज, जिसके भीतर पाप से युद्ध करने की उग्र भावना हो और वह कवियों का कवि= **कवीनां कवितमः**, जो पाप को मार देता है। सचमुच उस–जैसा क्रान्तदर्शी कौन हो सकता है, जो पाप से होने वाले भयङ्कर परिणामों का विचार करके पाप–नाश कर देता है! भयङ्कर–से–भयङ्कर युद्ध इतना भयङ्कर नहीं होता, जितना पाप से युद्ध। वेद में इस युद्ध का अनेक रूपों में वर्णन है। जिस प्रकार, सूर्य जब मेघ को छिन्न–भिन्न कर देता है तब संसार में हर्षोल्लास का विकास होता है, उसी प्रकार जब मनुष्य आत्मगत अहि–पाप को मार देता है तो उसके सारे दिव्य गुण चमकने लगते हैं। आत्मक्षेत्र में सफलता प्राप्त करके जब वह महाज्ञानी समाज–क्षेत्र में अवतीर्ण होता है और समाजगत दोषों, अपराधों के साथ युद्ध आरम्भ करता है और जब वह अपने पुरुषार्थ से समाजशुद्धि करने में सफलता प्राप्त करता है तब–'**अनु त्वाहिघ्ने अध देव देवा मदन् विश्वे कवितमं कवीनाम्**' पापनाश के निमित्त सब जीवजात इस कवियों के कवितम के विजय पर हर्षित होते हैं।

पाप–विनाश का एक रूप है–दरिद्रों के दुःखों को दूर करना। समाज की विषम व्यवस्था के कारण दुःखियों को बहुत कष्ट होता है। समाजगत विषमता के विनाश का ढंग ही यही है कि पीड़ितों की पीड़ा को दूर किया जाए, अतः वेद कहता है–'**करो यत्र वरिवो बाधिताय जनाय**'= जब बाधित=पीड़ित–दुःखग्रस्तजन की सेवा करता है। किसी दुःखी की सेवा करने से सेवा करने वाले के हृदय में कितना उल्लास होता है! और जिस पीड़ित की सेवा की गई है, जिसका दुःख दूर किया गया है, उसके मन से पूछो, उसके मन की क्या अवस्था है? वेद यह स्पष्ट कहता है कि जो बाधित हैं, पीड़ित हैं उनके बाधित होने में केवल समाज ही अपराधी नहीं है, वरन् बाधित का अपना भी अपराध है। वह अपराध है प्रमाद। इसको कहने के लिए वेद ने 'जनाय' का विशेषण भी दिया है। आलस्य और प्रमाद के कारण मनुष्य को अनेक प्रकार की हानियाँ उठानी पड़ती हैं। सुप्त=प्रमादी को मानो दिव्य गुण भी नहीं चाहते! अतः जो बाधित हैं, उन्हें प्रमाद, आलस्य, तन्द्रा–निद्रा को छोड़ पुरुषार्थ और उद्यम को अपनाना चाहिए।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां्शूद्रो अजायत।।

–यजु० ३१.११

भावार्थ–जो मनुष्य वेदविद्या और शम दमादि उत्तम गुणों में मुख के तुल्य उत्तम, ब्रह्म के ज्ञाता हों वे ब्राह्मण, जो अधिक पराक्रम वाले भुजा के तुल्य कार्यों को सिद्ध करने हारे हों वे क्षत्रिय, जो व्यवहार विद्या में प्रवीण हों वे वैश्य और जो सेवा में प्रवीण, विद्या हीन, पगों के समान मूर्खपन आदि नीच गुणयुक्त हैं, वे शूद्र मानने चाहियें। ऐसी वर्णव्यवस्था गुण–कर्म अनुसार ही वेद कथित है। जन्म से न कोई ब्राह्मण है, न ही कोई क्षत्रियादि। सब वेदानुयायी मनुष्यों को चाहिए कि ऐसी व्यवस्था के अनुसार आप चलें और औरों को चलावें।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत।।

–यजु० ३१.१२

भावार्थ–सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् परमात्मा ने प्रकृति रूप उपादान कारण से, इस ब्रह्माण्ड रूप विराट् शरीर को उत्पन्न किया। उसमें चन्द्रलोक मन स्थानी जानना चाहिए। सूर्यलोक नेत्ररूप, वायु और प्राण श्रोत्र के तुल्य, अग्नि मुख के तुल्य ओषधि और वनस्पतियाँ रोगों के तुल्य नदियाँ नाडियों के तुल्य और पर्वतादि हाड़ों के तुल्य हैं, ऐसा जानना चाहिए।

नाभ्या आसीद् अन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ अकल्पयन्।।

–यजु० ३१.१३

भावार्थ–इस संसार में जो–जो कार्यरूप पदार्थ हैं, वे सब, विराट् का ही अवयव रूप जानना चाहिए। ऐसे विराट् को भी जब परमात्मा ने बनाया तब यह सिद्ध हो गया कि, सारी भूमि और द्युलोकादि सब लोक, उनमें रहने वाले सब प्राणी, उस सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ने ही बनाये हैं। ये सब लोक न तो आप ही उत्पन्न हुए न इनका कोई और ही रचक है क्योंकि प्रकृति आप जड़ है, जड़ से अपने आप कुछ उत्पन्न हो नहीं सकता। जीव अल्पज्ञ परतन्त्र और बहुत ही थोड़ी शक्ति वाला है। सूर्य, चन्द्र आदि लोक लोकान्तरों का जीव द्वारा बनना असम्भव है।

शरीर-रक्षा के लिए योग-मार्ग

ले.-श्री विनोदकुमार मिश्रा

मानव-शरीर को बहुत ही दुर्लभ माना गया है, क्योंकि अन्य योनियाँ भोग-योनियाँ हैं, जबकि मनुष्य-योनि कर्म-योनि है जिस में प्राणी अपने भाग्य का निर्माण करने में स्वतन्त्र है। इसलिए तुलसीदास ने 'बड़े भाग मानुष तन पावा' तथा 'सुर दुर्लभ' कह कर इसकी महानता प्रदर्शित की है। भगवत्पाद शङ्कराचार्य ने भी तीन अति दुर्लभ वस्तुओं में से इसे एक माना है।

अब प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य-देह की इतनी महत्ता क्यों है? इस प्रश्न का उत्तर यही होगा कि शरीर के द्वारा ही मनुष्य अपने जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है तथा शारीरिक बन्धन से मुक्त हो सकता है। अपने पुरुषार्थ द्वारा ही वह परम-पद प्राप्त करता है और इस परमोद्देश्य की प्राप्ति करने में शरीर उसका एक विशेष उपकरण है। इसीलिए मनुष्य को जहाँ अपने मानसिक तथा बौद्धिक विकास के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए वहीं उसे शारीरिक विकास तथा शरीर-परिरक्षण के लिए भी सचेष्ट रहना चाहिए, क्योंकि अस्वस्थ तथा निर्बल शरीर से न तो ऐहिक और न पारलौकिक लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव है।

सारे रोग पहले मन में तथा उसके बाद शरीर में उत्पन्न होते हैं। इसलिए शरीर की आरोग्यता के लिए मन को नीरोग रखना आवश्यक है, क्योंकि शारीरिक रोगों का मूल बहुत बार मानसिक कारणों में होता है जो कि शारीरिक अस्वस्थता के मूल कारण हैं। इसीलिए इन द्विविध रोगों के निवारण के लिए योग में दो प्रकार की साधनाएँ निर्धारित की गयी हैं- बहिरङ्ग और अन्तरङ्ग। अष्टाङ्ग-योग के प्रथम पांच अङ्ग अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार बहिरङ्ग साधन हैं तथा अन्तिमोक्त तीन अङ्ग अर्थात् धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरङ्ग साधन कहे जाते हैं। यद्यपि ये सभी आठों अङ्ग परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं और बहिरङ्ग साधनों का प्रभाव अन्तरङ्ग साधनों पर भी पड़ता है तथापि शरीर की स्वस्थता के लिए बहिरङ्ग साधन तथा मानसिक स्वास्थ्य के लिए अन्तरङ्ग साधन विशेष रूप से उपयोगी हैं।

योगासन नियमित रूप से करने से शरीर और मन का बुढ़ापा जल्दी नहीं आता। शरीर और मन दोनों का सन्तुलन प्राप्त होता है। योग का अभ्यास करने से बहुत शीघ्र मनुष्य का चिड़चिड़ापन, क्रोध, अकारण चिन्तित रहने का स्वभाव, असन्तोष और दुराग्रह इत्यादि दूर हो जाते हैं। मन दिनों-दिन शक्तिशाली, विचारशील, सूक्ष्म, स्थिर और सौम्य बनता है। योग-विद्या ऐसे दु:खी, त्रस्त लोगों की समस्याओं का भी निदान करती है जो जीवन से निराश हैं, जो मानसिक रोग से पीड़ित हो आत्महत्या के लिए उतारू हैं। अन्य इसी प्रकार की समस्याओं का निराकरण योग के द्वारा होता है। अत: योग का पहला लाभ शारीरिक स्वास्थ्य की उपलब्धि है।

योगासनों को करने से अङ्ग-प्रत्यङ्ग के गठन, कोमलता, सुन्दरता एवं शारीरिक स्वास्थ्य के उत्तमोत्तम होने के अतिरिक्त पारमार्थिक लाभ भी प्रत्येक आसन की प्रत्येक किया में भरा हुआ है। योगासनों को करते रहने से हमारे शरीर के स्नायु मण्डल, अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियाँ और आन्तरिक अङ्ग तथा मांस-पेशियाँ सुचारू रूप से कार्य करने लगते हैं। इनके द्वारा अनेक दुर्बलताओं और साध्य-असाध्य शारीरिक एवं मानसिक रोगों का नाश होता है।

आसनों के नियमित अभ्यास से पहले तो शारीरिक रोग होते ही नहीं और यदि प्रमादवश अथवा किसी अन्य कारण से हो भी गये तो उन्हें आसनों द्वारा मिटाया जा सकता है, क्योंकि शरीर के एक आसन में स्थिर हो जाने पर और श्वासोच्छ्वास पर, जो नित्य निरन्तर अपने-आप चल रहा है, ध्यान केन्द्रित करते ही चञ्चल मन स्वयं स्थिर और शान्त हो जाता है। इस से मन की अशान्ति दूर हो जाती है और मानसिक रोग स्वत: शान्त हो जाते हैं।

इसके लाभ के विषय में कहा गया है-

''लघुत्वमारोग्यमलोलुपत्वं वर्णप्रसादं स्वरसौष्ठवं च। गन्ध: शुभो मूत्रपुरीषमल्पं योगप्रवृत्ति प्रथमां वदन्ति।।''

(श्वेताश्वतरोपनिषद् २-१३)

-शरीर का हल्कापन, नीरोगता, विषयासक्ति की निवृत्ति, शारीरिक कान्ति की उज्ज्वलता, स्वर की मधुरता: सुगन्ध और मलमूत्र की न्यूनता यह सब योग की पहली सिद्धि हैं।

कुछ लोगों की धारणा है कि आसन बुढ़ापे की चीज है, बचपन और युवावस्था में अन्य व्यायाम करने चाहिए। आसनों में समय अधिक लगता है, आसन बिना गुरु के सीखने से व्यक्ति दुनिया एवं घर वालों, घर-वार के काम-काज का ध्यान नहीं रखता है, आदि ये सभी तर्क अनुभवहीनता और अज्ञानता के ही परिचायक हैं।

इनके उत्तर में मैं तो यह कहूँगा कि आज के सङ्घर्षपूर्ण तनावमय, कुण्ठाग्रस्त और अस्त-व्यस्त जीवन में तो आसनों की और भी उपयोगिता एवं महत्ता है। मानव जीवन के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक सर्वाङ्गीण विकास के लिए आसन ही सर्वश्रेष्ठ साधन हैं। आसनों से शरीर की पुष्टि होती है, शरीर में सारे दिन लाघव बना रहता है तथा व्यक्ति अपना कार्य पूरे दिन मनोयोगपूर्वक करता हुआ भी आलस्य का अनुभव नहीं करता। मन एकाग्र होकर अध्यात्म के मार्ग पर बढ़ता है। आसनों के अभ्यास में अन्य व्यायामों की अपेक्षा समय लगता है।

अब प्रश्न यह होता है कि योगासनों का ही अभ्यास क्यों करें? क्यों न सामान्य शारीरिक व्यायाम किया जाए। इसका मुख्य कारण यह है कि योगासनों का अभ्यास करते समय शरीर के उन अङ्गों पर विशेष ध्यान दिया जाता है जहां खिंचाव पड़ता है। इसके द्वारा शरीर में स्फूर्ति बढ़ती है। प्राण-शक्ति-सञ्चय होता है। दैनिक कार्यों को पूरा करने में शरीर स्वस्थ और समर्थ होता है तथा आलस्य दूर होता है। इसके विपरीत व्यायाम में शरीर के उन अङ्गों पर ध्यान दिया जाता है जो संकुचित होते रहते हैं। इसमें प्राण शक्ति का ह्रास होता है तथा शरीर में सुस्ती बढ़ती है। आलस्य बढ़ता है, तथा देर तक विश्राम करने की आवश्यकता अनुभव होती है।

यहाँ चेतावनी के रूप में यह बताना चाहता हूँ कि योगाभ्यास में प्रवृत्त साधक को शारीरिक स्वास्थ्य पहले केवल सामान्य रूप से ही प्राप्त होता है। इतना ही नहीं उसके शरीर में विकृति भी होती है। इससे उसे चिन्तित नहीं होना चाहिए, कालक्रम में सब ठीक हो जाता है, क्योंकि विकृत अवयवों से विकृति निकालना और अवयव शुद्ध करना तथा रोगी न होना ही योगासनों का मूल उद्देश्य है।

योगाग्निमय शरीर के विषय में श्वेताश्वतर में बताया गया है-

पृथ्व्यप्तेजोऽनिल खे समुत्थिते पञ्चात्मके योगगुणे प्रवृत्ते। न तस्य रोगो न जरा न मृत्यु: प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।।

(श्वेताश्वतरोपनिषद् २,१२)

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश की अभिव्यक्ति होने पर, अर्थात् पञ्चभूतमय योग-गुणों का अनुभव होने पर, जिसे योगाग्निमय शरीर प्राप्त हो गया है, उस योगी को न रोग होता है, न वृद्धावस्था प्राप्त होती है और न उसकी असामयिक मृत्यु ही होती है।

योगासनों का अभ्यास प्रौढ़ युवक और वृद्ध भी कर सकते हैं। आसनों का अभ्यास करने वालों के लिए खान-पान में संयम आवश्यक है। उन्हें चाहिए कि थोड़ा भोजन करें और भोजन के पदार्थ सतोगुणी हों। आसन करते समय यदि श्वास प्रश्वास का भी ध्यान रखा जाए तो अधिक लाभ होगा।

पश्येम शरद: शतंजीवेम शरद: शत शृणुयाम शरद: शतं। प्रब्रवाम शरद: शतमदीना: स्याम शरद: शतम्।।

(यजुर्वेद ३६,२४)

''मैं सौ वर्ष तक देखूँ। मैं सौ वर्ष तक जीवित रहूँ। मैं सौ वर्ष तक सुनूँ। मैं सौ वर्ष पर्यन्त बोलूं। मैं सौ वर्ष तक सुखी (स्वस्थ) जीवन और स्वतन्त्र जीवन का भोग (सदुपयोग) करूँ।'' इस उद्देश्य की पूर्ति योगासनों के नियमित अभ्यास द्वारा अवश्यमेव हो सकती है।

सम्पादकीय

पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता

आज विश्व का सर्वाधिक चर्चित और चिन्तनीय विषय पर्यावरण है। पर्यावरण प्रदूषण विश्व की प्रमुख समस्या है। पर्यावरण के घटक तत्व हैं वायु, जल, भूमि, वृक्ष-वनस्पतियाँ। अथर्ववेद में सर्वप्रथम जल-वायु के अतिरिक्त ओषधियों या वृक्ष वनस्पतियों को पर्यावरण का घटक तत्व बताया गया है। वेद में इन तत्वों को छन्दस् कहा गया है। छन्दस् का अर्थ है- आवरक या पर्यावरण। अथर्ववेद का कथन है कि जल-वायु और वृक्ष वनस्पति ये पर्यावरण के घटक तत्व हैं और ये प्रत्येक लोक में जीवनी शक्ति के लिए अनिवार्य हैं, यदि ये नहीं होंगे तो मानव का जीवित रहना सम्भव नहीं है। इन तत्वों के प्रदूषण या विनाशन से पर्यावरण प्रदूषण होता है। आज विश्वभर में भूमि, जलवायु आदि सबको अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित किया जा रहा है। यांत्रिक उपकरण इस समस्या को और बढ़ा रहे हैं। जीवनी शक्ति प्राणतत्व या आक्सीजन के एकमात्र स्रोत वृक्ष वनस्पतियों को निर्दयतापूर्वक काटा जा रहा है। यदि वृक्ष नहीं होंगे तो मनुष्य को ऑक्सीजन नहीं मिल पाएगा और वह जीवित नहीं रह सकेगा। वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए जलवायु और वृक्ष वनस्पतियों को प्रमुख साधन बताया है।

वायु संरक्षण- वेदों में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, द्यु-भू अर्थात् भूमि और द्युलोक के संरक्षण की बात अनेक मन्त्रों में कही गई है। साथ ही वृक्ष वनस्पतियों के संरक्षण का आदेश दिया गया है। वेदों में वायु को अमृत कहा गया है। वायु जीवनीशक्ति देता है। इसको भेषज या ओषधि कहा गया है। यह प्राणशक्ति देता है और अपानशक्ति के द्वारा सभी दोषों को बाहर निकालता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि हम ऐसा कोई काम न करें, जिससे वायुरूपी अमृत की कमी हो। यदि हम प्राणवायु को कम करते हैं तो अपने लिए मृत्यु का संकट तैयार करते हैं। ऋग्वेद में मन्त्र आया है कि-

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे।
प्रण आयूँषि तारिषत्।।
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा।
स नो जीवातवे कृधि।।
यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसे।।

अर्थात् वायु हमारे हृदय के स्वास्थ्य के लिए कल्याणकारक आरोग्य कर ओषधि को प्राप्त कराता है और हमारी आयु को बढ़ाता है। यह वायु हमारा पितृवत् पालक, बन्धुवत् धारक, पोषक और मित्रवत् सुखकर्ता है और हमें जीवन वाला करता है। इस वायु के घर अन्तरिक्ष में जो अमरता का निक्षेप भगवान द्वारा स्थापित है, उससे यह वायु हमारे जीवन के लिए जीवनतत्त्व प्रदान करता है। अथर्ववेद में मन्त्र आया है कि-

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।
त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईयसे

अर्थात् वायु के संचार से शरीर का मल निकलकर स्वास्थ्य मिलता है और तार, विमान, ताप , वृष्टि आदि का संचार होता है।

द्यु-भू संरक्षण- द्यु में सूर्य और अन्तरिक्ष आते हैं तथा भू में भूमि या पृथिवी। सूर्य ऊर्जा का स्रोत है, अंतरिक्ष वृष्टि करता है और पृथिवी ऊर्जा और वृष्टि का उपयोग करके मानवमात्र को अन्नादि देकर मानव जीवन को संचालित करती है। इस प्रकार द्यु- अन्तरिक्ष और भू ये तीनों परस्पर सम्बद्ध हैं। पृथिवी जल अग्नि या सूर्य समन्वित रूप में मानव जीवन का संचालन कर रहे हैं। यह संतुलन जब बिगडता है, तब विनाश की प्रक्रिया शुरू होती है। अतः वेदों में इनके संतुलन को सुरक्षित रखने के लिए आदेश दिए गए हैं। अनेक मन्त्रों में कहा गया है कि द्युलोक, अन्तरिक्ष और भूलोक को सभी प्रकार के प्रदूषणों से बचावें। अथर्ववेद में विशेष रूप से कहा गया है कि भूमि के मर्मस्थानों को क्षति न पहुँचावे। ऐसा करने से जल के स्रोत आदि नष्ट होते हैं और भू-स्खलन तथा भूकंप आदि की संभावना बढ़ती है।

जल संरक्षण- वेदों में जल की उपयोगिता और उसके महत्व पर बहुत बल दिया है। जल जीवन है, अमृत है, भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल के विषय में कहा गया है कि जल से सभी रोग नष्ट होते हैं। जल सर्वोत्तम वैद्य है। जल हृदय के रोगों को भी दूर करता है। जल को ईश्वरीय वरदान माना गया है। अनेक मन्त्रों में जल को दूषित न करने का आदेश दिया गया है। जल और वृक्ष वनस्पतियों को कभी हानि न पहुँचावें। पुराणों में तो यहाँ तक कहा गया है कि नदी के किनारे या नदी में जो थूकता है, मूत्र करता है या शौच आदि करता है, वह नरक में जाता है और उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि-

अप्स्वन्तरमृततप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये।
देवा भवत वाजिनः।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस मन्त्र का भाष्य करते हुए लिखते हैं कि हे विद्वानों! तुम अपनी उत्तमता के लिए जलों के भीतर जो मार डालने वाला, रोग का निवारण करने वाला अमृतरूप रस तथा जलों में औषध हैं उनको जानकर उन जलों की क्रियाकुशलता से उत्तम श्रेष्ठ ज्ञान वाले हो जाओ। यजुर्वेद के छठे अध्याय के 22वें मन्त्र में कहा गया है कि मा नो हिंसीः अर्थात् जल को नष्ट मत करो।

वृक्ष वनस्पति संरक्षण- वेदों और ब्राह्मण ग्रन्थों में वृक्ष वनस्पतियों का बहुत ही महत्त्व वर्णन किया गया है। वृक्ष वनस्पति मनुष्य को जीवनी शक्ति देते हैं और उसका रक्षण करते हैं। ओषधियाँ प्रदूषण को नष्ट करने का प्रमुख साधन हैं। इसलिए उन्हें विषदूषणी कहा गया है। वेद में वृक्षों को पशुपति या शिव कहा गया है। ये संसार के विष कार्बनडाईआक्साईड को पीते हैं और इस प्रकार ये शिव के तुल्य विषपान करती हैं और प्राणवायु या ऑक्सीजनरूपी अमृत देती हैं। अतः वृक्षों को शिव का मूर्तरूप समझना चाहिए। इसी आधार पर ऋग्वेद में वृक्षों को लगाने का आदेश है। ये जल के स्रोतों की रक्षा करते हैं। एक मन्त्र में कहा गया है कि वृक्ष प्रदूषण को नष्ट करते हैं, अतः उनकी रक्षा करनी चाहिए।

प्रतिवर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। पर्यावरण की समस्याओं को लेकर सभी चिन्तन करते हैं। पर्यावरण का प्रदूषित होना पूरे विश्व के लिए एक जटिल समस्या है परन्तु इस समस्या का समाधान किस प्रकार हो? वर्तमान में हमें पर्यावरण की समस्या को खत्म करने के लिए हमें वैदिक चिन्तन को आधार बनाना होगा। वेदों के अनुसार यदि हम वनस्पतियों, ओषधियों, वृक्षों तथा जल और वायु का संरक्षण करते हैं तो इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है। इनका संरक्षण न होने के कारण ही आज प्रदूषण की समस्या फैलती जा रही है, जल दूषित हो रहा है, शुद्ध वायु नहीं मिल रही है जिससे अनेक प्रकार की बीमारियां बढती जा रही हैं।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

रामायण काल में स्त्रियों की स्थिति

-ले.-शिव नारायण उपाध्याय शास्त्री नगर दादाबाड़ी कोटा (राज.)

रामायण काल में स्त्रियों की दशा ठीक नहीं थी। समाज पुरूष प्रधान था। राजा लोग बहुपत्नीवाद के समर्थक थे। प्रत्येक राजा के कई पत्नियों के अतिरिक्त सैंकड़ों दासियां भी होती थी। राजा दशरथ के कौशल्या, सुमित्रा और कैकयी के अतिरिक्त भी कई रानियां थी। अयोध्या काण्ड 20वें सर्ग में कहा गया है।

तस्मिंतस्तु पुरूषव्याघ्रे निष्कामति कृताञ्जलौ।

आर्त शब्दो महान् जज्ञे स्त्रीणामन्त: पुरे तदा।। 1।।

पुरूष सिंह श्रीराम हाथ जोड़े हुए ज्यों ही कैकयी के भवन से बाहर निकलने लगे त्यों ही अन्त:पुर में रहने वाली राज महिलाओं का महान् आर्तनाद प्रकट हुआ।

फिर सर्ग 34 में वर्णन है। जब श्रीराम चन्द्र अपने पिता दशरथ से वन में जाने की आज्ञा मांगने आये तब राजा दशरथ ने सुमंत्र से कहा-

सुमन्त्रानय मे दारान् मे केचिदिहि मामका:।

दारै: परिवृत: सवैर्द्रष्टुमिच्छामि राघवम्।। 10।।

सुमन्त्र। यहां जो कोई भी मेरी स्त्रियां हैं उन सबको बुलाओ। उन सबके साथ मैं श्रीराम को देखना चाहता हूँ!

तब सब रानियों को बुलाया गया। वे संख्या में 350 थीं।

अर्धसप्तशतास्तत्र प्रमदा-स्ताम्र-लोचना:।

प्रचक्रमुस्तद् भवनं भर्तु राज्ञाय शासमम्।। 2।।

राजा की आज्ञा से सुमन्त्र के ऐसा कहने पर वे सब रानियां जो कुछ-कुछ लाल नेत्रों वाली साढ़े तीन सौ पतिव्रता युवती स्त्रियां महारानी कौसल्या को सब ओर से घेर कर धीरे-धीरे उस भवन में गई।

जब श्रीराम माता कौसल्या से वन में जाने की आज्ञा लेने आये तब कौसल्या ने कहा-

साबहून्यमनोज्ञानि वाक्यानि हृदयच्छिदाम्।

अहं श्रोष्ये सपत्नीनाम वराणां परा सती।। अयोध्या काण्ड 20.39

बड़ी रानी होकर भी मुझे अपनी बातों से हृदय को विदीर्ण कर देने वाली छोटी सौतों के बहुत से अप्रिय वचन सुनने पड़ेंगे।

अत्यन्तं निगृहीतास्मि भर्तुर्नित्यमसम्मता।

परिवारेण कैकेव्या: समा वाप्यथवावरा।। अयोध्या 20.42

पति की ओर से मुझे सदा अत्यन्त तिरस्कार अथवा कड़ी फटकार ही मिली है। मैं कैकयी की दासियों के बराबर अथवा उनसे भी गयी-बीती समझी जाती हूँ।

उस समय दासी प्रथा भी थी राजा जनक ने सीता जी के विवाह में कई दासियां दहेज में दी थी।

ददौ कन्या शतं तासां दासी दासमनुत्तमम्।

हिरण्यस्य सुवर्णस्य मुक्तानां विद्रुमस्य च।। बाल काण्ड 74.5

अपनी पुत्री के लिए सहेली के रूप में सौ-सौ कन्याएं तथा उत्तम-उत्तम दास दासियां अर्पित की। इनके अतिरिक्त राजा ने एक करोड़ सुवर्ण मुद्रा, रजत मुद्रा, मोती तथा मूंगे भी दिये।

उन दिनों नियोग प्रथा भी प्रचलित थी। पति की मृत्यु अथवा संतान उत्पन्न करने में असमर्थ होने पर स्त्री अपने पति के छोटे भाई अथा गौत्र के हिसाब से छोटे गौत्री भाई जिन्हें देवर कहा जाता है से शारीरिक संबंध बना कर संतान उत्पन्न कर सकती थी। स्त्रियों के लिए शिक्षा की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी परन्तु उनको वेदाध्ययन से रोका भी नहीं जाता था। वह प्रतिदिन प्रात: सायं अपने पति के साथ ब्रह्मयज्ञ और देवयज्ञ करती थी। जब श्रीराम माता कौसल्या से वन में जाने की आज्ञा लेने के लिए उनके महल में गये तब वे देवयज्ञ कर रही थी।

प्रविश्य तु तदा रामो मातुरन्त:पुरं शुभम्।

ददर्श मातरं तत्र हावयन्ती हुताशनम्।। अयोध्या काण्ड 20.16

उसी समय श्रीराम ने माता के शुभ अन्त:पुर में प्रवेश करके वहां माता को देखा। वे अग्नि में हवन कर रही थी।

स्त्रियों को विवाह के पूर्व ही पतिव्रत धारण करने की शिक्षा दी जाती थी। अयोध्या काण्ड सर्ग 117 में अनुसूयाजी सीता को उपदेश देती है-

नगरस्थो वनस्थो वा शुभो वा यदि वाशुभ:।

यासां स्त्रीणां प्रियो भर्ता तासां लोका महोदया:।। 23।।

अपना स्वामी नगर में रहे या वन में, भले हो या बुरे, जिन स्त्रियों को वे प्रिय होते हैं उन्हें महान् अभ्युदयशाली लोकों की प्राप्ति होती है।

दु: शील कामवृत्तो व धनैर्वा परिवर्जित।

स्त्रीणामार्य स्वभाव वा नां परमं दैवतं पति:।। 24।।

पति बुरे स्वभाव का, मनमाना बर्ताव कर करने वाला अथवा धनहीन ही क्यों न हो वे उत्तम स्वभाव वाली नारियों के लिए श्रेष्ठ देवता के समान हैं।

फिर सीता अगले सर्ग (अयोध्या काण्ड सर्ग 118) में कहती है-

नैतदाश्चर्यमार्यायां यन्मां त्वमनुभाषसे।

विदितं तु ममाप्ये तद् यथा नार्या: पतिर्गुरू:।। 2।।

देवी। आप संसार की स्त्रियों में सर्वश्रेष्ठ हैं। आपके मुंह से ऐसी बात सुनना आश्चर्यजनक नहीं है। इन विषय में जैसा आपने उपदेश किया है यह बात मुझे पहले से ही विदित है।

यद्यप्येष भवेद् भर्ता अनार्यो वृत्तिवर्जित:।

अद्वैधमत्र वर्तव्यं तथाप्येष मया भवेत्।। 3।।

मेरे पति देव यदि अनार्य (चरित्रहीन) तथा जीविका के साधनों से रहित (निर्धन) होते तो भी मैं बिना किसी दुविधा के इनकी सेवा में लगी रहती।

किं पुनर्यो गुणश्लाध्य: सानुक्रोशो जितेन्द्रिय:।

स्थिरनुरागो धर्मात्मा मातृवत्पितृवत्प्रिय:।। 4।।

फिर जबकि ये अपने गुणों के कारण ही सबकी प्रशंसा के पात्र हैं तब तो इनकी सेवा के लिए कहना ही क्या है। ये रघुनाथ जी परम दयालु, जितेन्द्रिय, दृढ़ अनुराग रखने वाले तथा माता-पिता के समान प्रिय हैं।

वाणिप्रदान काले च यत् पुरा त्वग्नि सं निधौ।

अनुशिष्टं जनन्या मे वाक्यं तदपि मे धृतम्।। 8।।

पहले मेरे विवाह काल में अग्नि के समीप माता ने मुझे जो शिक्षा दी थी वह भी मुझे अच्छी तरह स्मरण है। स्त्रियों का परिवार के धन में कोई अधिकार नहीं होता था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रामायण काल में स्त्रियों की दशा शोचनीय थी।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती का शूद्रों के साथ महान उपकार

ले.-डा. शिवपूजनसिंह कुशवाह

(गतांक से आगे)

अर्थात्-कवष ऐलूष की कथा से तो यहाँ तक पाया जाता है कि शूद्र मन्त्रद्रष्टा तक हुए हैं।

इतना लिखने पर भी आचार्य के हृदय को सन्तोष न हुआ तो वे शूद्रों का वेदाधिकार सिद्ध करने के लिए बड़े गर्व से महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के भाष्य का अवतरण देते हुए लिखते हैं:-

''शूद्रस्य वेदाधिकारे साक्षाद् वेदवचनमपि प्रदर्शितं स्वामि-दयानन्देन (वाजसनेयि-संहिता २६,२), यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य:। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय इति तदेवं वेदविधे: पक्षपातदोषभावर्त्वं न कथमपीति स्पष्टम्।''

(ऐतरेयालोचनम् पृष्ठ १७)

अर्थात्-''शूद्रों के वेदाधिकार में स्वामी दयानन्द जी ने साक्षात् यजुर्वेद (२६,२) के वचन 'यथेमां वाचं कल्याणीम्' को प्रदर्शित किया है। और इस प्रकार यह भी स्पष्ट है कि वेद के विधान में किसी तरह के पक्षपात का दोष नहीं लगाया जा सकता।''

आचार्य सामश्रमी जी की पुष्टि में पं० आत्माराम जी अमृतसरी बड़ौदा अपने "Maharshi Dayanand Saras-wati and Untouchability" शीर्षक अंग्रेज़ी-लेख में लिखते हैं-

"But a well-known Sanskrit scholar of Bengal Pandit Satyavrat Samasrami, who is neither a member nor a supporier of the Arya Samaj and who is well-known for his Sanskrit research work to the Government of India, has in his latest book 'Aitareya-ALochana' not only gives a similar translation and exposition of this epoch-making mantra but has in plain words, by giving reference of Swami Dyanand Saraswati and the tranlation which the great Rishi Dyananand made fifty years ago, corroborated every word of the same. He like Rishi Dayanand says that from Brahmin down to the Cobbler every human being is entitled to the study of the Vedas."

अर्थात्-''बंगाल के प्रसिद्ध संस्कृत-गवेषक पं० सत्यव्रत सामश्रमी जो कि आर्य समाज के न तो सदस्य और न समर्थक हैं और भारतीय सरकार के सुप्रसिद्ध संस्कृत-गवेषक हैं, अपनी अन्तिम पुस्तक 'ऐतरेयालोचन' में ऋषि दयानन्द जी के अनुवाद का उद्धरण देते हैं, जिसको ५० वर्ष पूर्व महान् ऋषि दयानन्द जी ने किया था। वह ऋषि दयानन्द जी के सदृश ही कहने हैं कि ब्राह्मणों से लेकर अछूतों तक प्रत्येक मानव को वेदाध्ययन का अधिकार है।''

(ख) कविवर श्री दुलारेला जी भार्गव, सम्पादक पाक्षिक ''सुधा'' लखनऊ, अपने ''महर्षि दयानन्द और नारी-समाज'' शीर्षक लेख में नारी व सभी जाति के बालिका-विद्यार्थियों को वेदाधिकार सिद्ध करने के लिए यजु० (२६,२) पर महर्षि दयानन्द जी के भाष्य को प्रस्तुत करते हैं।

(ग) पौराणिक पण्डित गंगाप्रसाद जी शास्त्री, चाह इन्दारा, दिल्ली, यजु० (२६,२) पर महीधरभाष्य की आलोचना करते हुए महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के समान ही अर्थ करके सब को वेदाधिकार सिद्ध करते हैं। वे अर्थ करते हैं-''हे शिष्यो! जिस प्रकार मैं इस वेदवाणी को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, मित्र, शत्रु सब के लिए कहता हूँ, उसी प्रकार तुम भी इसका सब मनुष्यों को उपदेश दिया करो।''

(घ) परलोकवासी आचार्य पं० इन्दिरारमण जी शास्त्री अपने ''अन्त्यजों का वेदाधिकार'' शीर्षक लेख में महर्षि दयानन्द जी के वेदभाष्य का समर्थन करते हुए लिखते हैं:-''...स्वामी दयानन्द ने इस मन्त्र द्वारा शूद्रों के वेदाध्ययन का अधिकार प्रमाणित किया है। जब अध्ययनाधिकार सिद्ध हो चुका, तब यज्ञ में अधीत मन्त्रों के उद्गान का और तत्सम्बद्ध वैदिक कर्मों के अनुष्ठान का अधिकार भी स्वत: प्राप्त हो जाता है।''

(ङ) श्री आर. के. मुखर्जी का कथन है:-"It is contended that this refers to the equal right of all classes to the study of the Veda."

श्री मुखर्जी ने यह निष्कर्ष निकाला है कि ''वेदों को अध्ययन करने का सभी वर्गों के व्यक्तियों को समान अधिकार था।''

(च) श्री वैष्णव सम्प्रदाय के आचार्य, स्वामी भगवदाचार्य जी महाराज पण्डितराज परमहंस, परिव्राजक, वेदरत्न, निरुक्त-भूषण, व्याकरण-शिरोमणि, विद्याभास्कर, साहित्यालङ्कार यजु० (२६,२) का संस्कृत में भाष्य करते हुए लिखते हैं:-

''यथेमां वाचमिति। अत्र किं चिद्वक्तव्यम्। स्वामि-दयानन्देन यथेमामि-त्यारभ्य चारणाय चेत्यन्तेन शूद्राणामपि वेदेऽधिकार इति साधितम्। दयानन्द स्वामिना मन्त्रार्थभागेन सर्वेषां वेदेष्वधिकार इत्युक्तम्। तत्तु समीचीनमेव।''

अर्थात्-''यहां कुछ वक्तव्य है। स्वामी दयानन्द ने 'यथेमां...' के भाष्य में 'चारणाय' शूद्र को भी वेदाधिकार है; यह सिद्ध किया है। स्वामी दयानन्द जी मन्त्रार्थ में सब के लिए वेदों में अधिकार कहते हैं यह समीचीन है।...''

पुन: आप अपने एक लेख में महर्षि दयानन्द जी के भाष्य को स्पष्ट स्वीकार करते हुए लिखते है-''वेद ईश्वरीय पुस्तक है। जैसे द्विजाति, वैसे ही शूद्र भी भगवान् की उत्पादित प्रजा है। हस्तपादादि, जिह्वा, नेत्रादि और स्मरणशक्ति आदि भी ब्राह्मणादि और शूद्रों के समान ही हैं। अत: जैसे पण्डित ब्राह्मणादि वेदपाठ कर सकते हैं वैसे ही पण्डित शूद्र भी वेदपाठ कर सकता है। रही प्रमाण की बात। प्रमाण की अपेक्षा तब हुआ करती है जब पाप और पुण्य का विकट प्रश्न उपस्थित हो। पाप तभी होता है जब किसी के साथ अन्याय, अनाचार, अत्याचार, दुराचार और बलात्कार आदि किए जाएँ। ऐसे ही पुण्य भी तभी होता है जब किसी के साथ न्याय, सदाचार, उपकार आदि किए जाते हैं। जहाँ यह सब न हो, वहाँ पाप और पुण्य का विचार नहीं उठ सकता। इसके पढ़ने से पाप तो होता नहीं, धर्म भी नहीं होता। वेद पढ़ने से धर्म तब होता है, जब वेदोपदिष्ट सदाचार का पालन किया जाए। वेदों के केवल पाठ करने से भी धर्म होता है। इस कथन में मेरा अपना विश्वास नहीं है। ऐसी स्थिति में वेदाध्ययन में शूद्राधिकार के समर्थन के लिए प्रमाण ढूँढने के लिए मुझे कुछ भी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। किंच, वेद ईश्वरीय ग्रन्थ है। ईश्वर ने कहीं यह कहा हो कि शूद्र इसे न पढ़ें, ऐसा मुझे स्मरण नहीं है। अत: सब के समान ही शूद्र भी वेद पढ़ सकता है। मैक्समूलर आदि अनेक विदेशीय विद्वान् वेदों को पढ़ गए और समझ गए। उन पर उन्होंने टीका-टिप्पणी भी की और उनका अनुवाद भी किया। उन्होंने कभी किसी से यह नहीं पूछा कि, ''हमें वेदों के पढ़ने का अधिकार है कि नहीं?'' वेद पढ़ने से उन्हें नरक मिला हो या ईश्वर से दण्ड मिला हो, यह भी नहीं कहा जा सकता। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'यथेमां वाचं कल्याणीम्' इस मन्त्र से शूद्राधिकार सिद्ध किया है, वह बहुत हद तक समुचित है।...''

इस प्रकार छ: ऐसे विद्वानों ने महर्षि दयानन्द जी के भाष्य का समर्थन किया है, जो 'आर्यसमाजी' न हैं और न थे।

यज्ञ के लाभ

ले.-पण्डित वेदप्रकाश शास्त्री, 4-E, कैलाश नगर, फाजिल्का, पंजाब

(गतांक से आगे)

12. यज्ञ से वायु की शुद्धि होती है। जहां यज्ञ होता है वहां से दूर देश में स्थित पुरुष की नासिका से सुगन्ध का ग्रहण होता है, वैसे ही दुर्गन्ध का भी। इतने ही से समझ लो कि अग्नि में डाला गया पदार्थ सूक्ष्म हो के फैल के, वायु के साथ दूर देश में जाकर दुर्गन्ध की निवृत्ति करता है।

एक विपरीत उदाहरण से भी यह बात स्पष्ट हो जाएगी। जैसे अन्धविश्वासी लोग कई बार नज़र उतारने के लिए लाल मिर्च अग्नि में डाल देते हैं। परन्तु परिणाम क्या होता है। चारों ओर मिर्च के सूक्ष्म कण फैल कर खांसी उत्पन्न कर देते हैं, आंखों में जलन होने लगती है, छींके आने लगती हैं। देखा आपने! मिर्च को अग्नि में डालने का क्या फल मिला ?

इसी प्रकार हवन में सुगन्धित, पौष्टिक, मिष्ट और रोगनाशक औषधियां, जड़ी बूटियां डालने से चारों ओर सुगन्ध फैल जाती है, वातावरण शान्तिदायक और प्रसन्नतापूर्ण हो जाता है। वायु शुद्ध हो जाती है। जो सारे जीवजन्तु, मनुष्य एवं पेड़-पौधे सभी के लिए लाभदायक होती है।

13. यज्ञ से जल की शुद्धि होती है। जब हवन किया जाता है तो उसके ऊपर उठे हुए सूक्ष्म कण चारों ओर फैल कर वायु के माध्यम से आकाश में पहुंचते हैं। आकाश से और ऊपर उठ कर अन्तरिक्ष में फैल जाते हैं, जिससे बादल बनते हैं, बादलों से शुद्ध जल की वर्षा होती है। शुद्ध जल से अन्न भी शुद्ध होता है, अन्न शुद्ध होने से सभी प्राणी स्वस्थ होते हैं, पेड़-पौधों को शुद्ध जल मिलने से उनमें भी चेतनता आ जाती है, हरे भरे, प्रफुल्लित होने से चित्ताकर्षक लगते हैं।

नदियों में भी शुद्ध जल बहता है, जिससे जलीय जीव जन्तुओं की रक्षा होती है। शुद्ध जल के भूमि के अन्दर जाने से भूमिगत जल शुद्ध होता है। पेय जल के रूप में दोहन से हमें शुद्ध जल मिलता है।

वन्य जीव जन्तुओं को भी शुद्ध जल मिलता हैं जिससे वे भी स्वस्थ रहते हैं। वन्य पेड़ पौधे भी लहलहाते हैं और वर्षा में सहायक होते हैं। शुद्ध ऑक्सीजन भी प्रदान करते हैं।

14. प्रत्येक व्यक्ति के लिए यज्ञ करना इसलिए भी आवश्यक है। क्योंकि यज्ञ से जल, वायु की शुद्धि होती है। प्रदूषण से मुक्ति मिलती है।

एक बात और भी ध्यातव्य है- वह यह कि प्रत्येक मनुष्य मल-मूत्र के द्वारा गन्दगी फैलाता है। घर में तमाम तरह का कूड़ा कर्कट, पालीथीन, प्लास्टिक, गन्दा पानी आदि से प्रदूषण फैलाता है। वाहनों, कलकारखानों से उत्सर्जित गैसें, रासायनिक पदार्थ, धुआं उगलती चिमनियां ये सभी जल और वायु तथा भूमि को प्रभावित करते हैं।

इनमें से जल और वायु की शुद्धि के लिए सर्वश्रेष्ठ साधन है-यज्ञ रचाएं, वृक्ष लगाएं। प्रदूषण से मुक्ति पाएं।।

15. सन्ध्या-हवन में ईश्वर स्तुति-प्रार्थना-उपासना हवन संबंधी वेदमन्त्रों का उच्चारण किया जाता है जिससे वाणी पवित्र होती है। वेद की रक्षा होती है। वेदमन्त्रों का अर्थ चिन्तन करने से होने वाले लाभों का पता चलता है। मन यज्ञ कार्य के प्रति एकाग्र रहता है। वाणी का सदुपयोग भी होता है।

16. यज्ञ करने से उस स्थान का वायु गर्म होकर हल्का हो जाता है और रोशनदान, खिड़की, दरवाजों से बाहर निकल जाता है तथा बाहर की शीतल वायु भारी होने से अन्दर आ जाती है। जो स्वास्थ्यकर होती है।

17. दान की भावना जागृत होती है और बढ़ती जाती है। कभी-कभी कई व्यक्ति दान दाता को दान देने से रोक देते हैं। यह उचित नहीं। यह पाप कर्म है। वस्तुत: रोकने के स्थान पर प्रेरणा करनी चाहिए कि अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ न कुछ दान अवश्य करें।

18. यज्ञ सदृश महापुरुषों की श्रेष्ठ परम्परा और आदर्शों की रक्षा करना हमारा परम धर्म है।

श्रीराम और श्री कृष्ण हमारे आदर्श महापुरुष हैं। वे भी सन्ध्यावन्दन और यज्ञ प्रतिदिन करते थे।

महर्षि विश्वामित्र के साथ श्री राम और लक्ष्मण यज्ञ रक्षा हेतु जा रहे थे। रात्रि में विश्राम किया। प्रात: काल होने पर विश्वामित्र ने श्रीराम से कहा-

कौशल्या सुप्रजा राम! पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते।

उत्तिष्ठ नरशार्दूल! कर्त्तव्यं दैवमाह्निकम्।। वा. रा. बाल. 23/2

हे कौशल्या पुत्र राम! प्रात: काल हो गया। यह सन्ध्या उपासना का समय है। अत: प्रात: काल का नित्य कर्म यज्ञ आदि कीजिए।

तस्यर्षे: परमोदारं वच: श्रुत्वा नरोत्तमौ।

स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतु: परमं जपम्।। वा. रा. बाल 23/3

उस ऋषि के परम पवित्र उदार वचनों को सुन कर पुरुषों में श्रेष्ठ राम और लक्ष्मण ने स्नान करके सन्ध्योपासना के पश्चात् परम जप ओ३म् और गायत्री का जप किया।

महात्मा तुलसीदास राम चरित मानस में लिखते हैं-

विगत दिवस गुरु आयसु पाई।

सन्ध्या करन चले दोऊ भाई।।

वनगमन से पूर्व प्रात: काल श्रीराम माता कौशल्या से आज्ञा लेने के लिए उनके भवन में गए। उस समय माता कौशल्या हवन कर रही थीं-

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यव्रत परायणा।

अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत्कृतमंगला।।

अयो. 20/15

रेशमी वस्त्रों को धारण किए हुए व्रतपरायण प्रसन्न चित्त मंगलाचार गाती हुई माता कौशल्या उस समय सन्ध्या एवं परमात्मा का ध्यान कर वेदमन्त्रों से अग्निहोत्र कर रही थीं।

माता से आज्ञा लेकर श्रीराम यशस्विनी सीता के पास चले। सीता को अब तक श्रीराम के वन जाने का पता नहीं था। जब श्रीराम पहुंचे, उस समय सीता श्रीराम की प्रतीक्षा कर रही थीं-

देवकार्यं स्वयं कृत्वा कृतज्ञा हृष्ट चेतसा।

अभिज्ञा राजधर्माणां राजपुत्रं प्रतीक्षते।।

राजधर्म को जानने वाली सीता अपने सन्ध्योपासना अग्निहोत्रादि दैनिक कार्य से निवृत्त होकर अभिषिक्त राम की प्रतीक्षा कर रही थी।

वेदों के प्रकाण्ड पण्डित हनुमान सीता को खोजते हुए लंका में एक नदी के किनारे पहुँचे। उस समय सन्ध्याकाल था। सांय काल के उस प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर वह अपने मन में विचार करने लगे कि यदि सीता जीवित है तो-

सन्ध्याकाल मन: श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी। नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी।।

सुन्दर. 14/49

सन्ध्या काल में सन्ध्या करने के लिए जानकी इस शुभ जल वाली नदी पर निश्चय ही आएगी।

इस कथन से यह भी प्रतीत होता है कि हनुमान को नदी के किनारे की जाने वाली सन्ध्या की महत्ता का विस्तृत ज्ञान था। जैसा कि मनुस्मृति के वचन से प्रतीत होता है-

अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थित:।

सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहित:।। मनु. 2/104

जंगल में अर्थात् एकान्त देश में जा, सावधान हो के जल के समीप स्थित हो के, नित्य कर्म को करता हुआ सावित्री अर्थात् गायत्री मन्त्र का उच्चारण, अर्थज्ञान और उसके अनुसार अपने चालचलन को करे, परन्तु यह जप मन से करना उत्तम है।

इस सन्ध्या वन्दन, जप, हवन की विधि, स्थान आदि से हनुमान भलीभांति परिचित थे।

योगिराज श्री कृष्ण भी सन्ध्या, अग्निहोत्र आदि नित्यकर्म अवश्य करते थे। श्रीमदभागवत 10/70/6 के अनुसार-श्रीकृष्ण ने विधिपूर्वक निर्मल और पवित्र जल में स्नान करके, दुपट्टा ओढ़ कर बड़ी श्रद्धा और कुशलतापूर्वक आवश्यक नित्यकर्म सन्ध्या, जप, अग्निहोत्र आदि सम्पन्न किया।

ऐसे आदर्शमय महापुरुषों का अनुकरण करना क्यों आवश्यक है। इस सम्बन्ध में योगिराज श्रीकृष्ण कहते हैं-

यद् यदाचरति श्रेष्ठ: तत् तदेवेतरो जन:।

स यत् प्रमाणं कुरुते लोक: तदनुवर्तते।। गीता 3/21

श्रेष्ठ पुरुष जो जो आचरण करता है, अन्य पुरुष भी उस उस के अनुसार ही बर्तते हैं। वह पुरुष जो कुछ प्रमाण कर देता है, लोग भी उसके अनुसार ही बर्तते हैं।

अत: श्रीराम, श्रीकृष्ण, महर्षि दयानन्द सदृश महापुरुषों ने वेदानुसार यज्ञादि सत्कर्म स्वयं करते हुए जनसामान्य के लिए जिस स्वस्तिपथ का प्रदर्शन किया है, हमें उसका अनुगमन करना ही चाहिए। तभी हम आगामी सन्तति के लिए यथार्थत: आदर्श बन सकते हैं।

दयानन्द मठ चम्बा में पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज का जन्मदिन सुखपूर्वक सम्पन्न

मेरे प्रिय आत्मीयजनों कोटिश: प्रणाम। मंगलमय परम कृपालु प्रभु की अपार कृपा से व उन्हीं पूज्य चरणों के तथा दिव्यजनों, दिव्यात्माओं के अमोघ आशीर्वाद के फलस्वरूप पूज्य स्वामी जी महाराज का 3, 4, 5 मई का त्रिदिवसीय जन्मोत्सव का कार्यक्रम भव्य से भव्यतम रूप से सुखपूर्वक सम्पन्न हो गया है। इसके लिए जहां उस परम पिता का व उन पूज्य चरणों के साथ-साथ दिव्यजनों व दिव्यात्माओं का धन्यवाद करता हूं। जिनकी पवित्र पावनी शीतल छाया में यह सब संभव हो पाया है। वहीं आप सभी आत्मीयजनों का आभार भी व्यक्त करता हूं जिनकी मंगलकामनाओं के परिणामस्वरूप ही यह कार्यक्रम निर्बाध रूप से सफलतापूर्वक सम्पन्न हो पाया है।

प्रियजनों, आप लोग कार्यक्रम में भाग ले पाए अथवा न ले पाए, आप लोगों ने अपनी ओर से यज्ञ का भाग भेजा अथवा न भेजा यह अलग बात है। इसके लिए आपकी स्थिति-परिस्थितियां कारण हो सकती हैं। इसके विषय में न मुझे कुछ कहना है और न ही कुछ कहना चाहिए। परन्तु हमें तो आप लोगों के सहारे का आभास होता रहता है। हमारे पीछे हमारे आत्मीयजन हैं। पूज्य स्वामी जी के प्रियजन हैं। इस संस्था के हितैषीजन हैं, बस इसी ही विश्वास के साथ हमारे कदम आगे ही आगे बढ़े जा रहे हैं। हमारे सभी संकल्पित कार्य पूरे होते जा रहे हैं। निर्विघ्न रूप से पूर्णत्व को प्राप्त हो रहे हैं। हमारे लिए यही बहुत है। दिव्यजनों व दिव्यात्माओं के आशीर्वादों की वर्षा भरपूर रूप से हो रही है। परम कृपालु का सुरक्षा कवच हमारे चारों ओर बना हुआ है। हमारे किसी भी कार्य में कोई विघ्न, कोई बाधा चाहे वह दैविक हो चाहे भौतिक हो कोई भी उपस्थित नहीं हो पाती। हमारे सभी कार्य निर्बाध रूप से चल रहे हैं। फिर भी अपने आत्मीयजनों की, अपने प्रियजनों की उपस्थिति की लालसा तो मन में बनी ही रहती है। हमारे प्रियजन, हमारे अपने आत्मीय लोग भी आएं, इन कार्यक्रमों में भाग लें। इन यज्ञादि कार्यों को हम सब लोग मिलकर करें। मिलजुल कर इन्हें सम्पन्न करे यह इच्छा तो हर दम बनी ही रहती है और यह भावना बनी भी रहनी चाहिए। स्वार्थवश नहीं अपितु परस्पर कल्याण की कामना से बनी रहनी चाहिए। एक दूसरे के हित की भावना से बनी रहनी चाहिए। यह यज्ञादि कर्म श्रेयस कर्म है। यह कर्म महान कल्याणकारी फलों के दाता हैं। इनके द्वारा इहलोक व परलोक में भी मनुष्य महान सुखों का उपभोग करता है-

ददाति परमं सौख्यं इहलोके परत्रच।
भुनक्ति परमम् सौख्यम्जगतिशाश्वतीसमा:।

यज्ञादि पुण्य कर्मों से जनित सुख को मनुष्य युगों-युगों तक भोगता है। यह सब अपने जीवन काल में भी हम अनुभव कर रहे हैं। इसीलिए तमन्ना रहती है हम सभी प्रियजन मिलकर इन सुखों का, इन आनन्दमय क्षणों का उपभोग करें। वेद भगवान का भी आदेश है-**सहनौ अवतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहे**-हे मनुष्यों तुम्हारी भावना होनी चाहिए कि हम सबकी रक्षा हो। हम सब मिलकर सुखों का उपभोग करें। हम सब मिलजुल कर अपनी शक्ति को बढ़ाएं। अपने तेज को विकसित करें। तुम्हारी कामना होनी चाहिए। **सर्वे भवन्तु सुखिन:** संसार में सभी प्राणी सुखी हों, सभी निरोगी हों। सभी लोग भद्र यानि अच्छा ही देखें। **शुभेन कर्मणा सौख्यम् दु:खं पापकर्मणा।** शुभ कर्मों से अच्छे कार्यों से सुख प्राप्त होता है। पाप के कर्मों का परिणाम दु:ख है। यह शास्त्रकार भी कहते हैं। यज्ञादि कर्म श्रेष्ठ कर्म है, शुभ कर्म है। अगर यह सत्य है तो फिर इन कर्मों को हम सब मिलकर करें। इनके सुखद फलों का उपभोग मिलकर करे। सब मिलकर इसका आनन्द उठाएं। वेद पुन: कहता है-**केवलाघो भवति केवलादि।** अकेला खाने वाला केवल और केवल पाप का भक्षण करता है। चाहे वह अन्न, धन के रूप में हो, चाहे सौख्य-सम्पदा के रूप में ही क्यों न हो। या आध्यात्म जगत का वह आनन्द ही क्यों न हो जो इन यज्ञ यज्ञादि कर्मों से जनित है। सब ही को मिल बांटकर खाने का, उनका उपभोग करने की मनसा होनी चाहिए। इसी को विघस अन्न कहते हैं। मनु जी महाराज कहते हैं-

विघसाशी भवेन्नित्यम्।
नित्यम वाऽमृत भोजनम्।।

मनुष्य को नित्य विघस अन्न खाना चाहिए। नित्य ही अमृत रूप अन्न का भक्षण करना चाहिए। आगे विघस अन्न क्या है? उसके विषय में कहा है। **विघसो भुक्त शेषं तु** सबके खाने के बाद खाया जाने वाला अन्न विघस अन्न होता है। निश्पाप अन्न होता है। ऐसे भोगों को भोगने वाला व्यक्ति परम लोकों को प्राप्त करता है। शास्त्र के इन्हीं आदेशों से अभिभूत मैं भी अपने सभी प्रियजनों के साथ मिलकर इस यज्ञादि कार्यों के आनन्द का उपभोग मिल बैठकर करना चाहता हूं। इसीलिए आप सभी अपने प्रियजनों को पत्र-पत्रिका के माध्यम से इसके लिए प्रेरित व आन्दोलित करता रहता हूं। आमन्त्रित व निमन्त्रित करता रहता हूं। यह मेरा धर्म है। यही मेरा कर्तव्य भी है। जिसका निर्वहन कर मैं अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता हूं। आगे आप सभी का अपना विषय है।

स्मृति कक्ष का लोकार्पण-पूज्य चरणों के जन्मोत्सव के कार्यक्रम का इस बार पूज्यवरों की प्रतिमा से सुसज्जित उनकी स्मृति स्थल का लोकार्पण मुख्य आकर्षण का केन्द्र रहा।

पूरे यज्ञ का कार्यक्रम मठ के संरक्षक महान कर्मकाण्डी यज्ञों के लिए समर्पित त्यागी, तपस्वी, सिद्धान्त शिरोमणी पूज्य चरणों के एकमात्र सन्यस्त शिष्य पूज्य स्वामी सवितानन्द जी महाराज झारखण्ड वालों के ब्रह्मत्व में चला, जिनका आशीर्वाद अहर्निश हमें प्राप्त हो रहा है। संस्था के लिए, हमारे लिए जिनके चिन्तन के परिणामस्वरूप हम सर्वथा निश्चिन्त हैं। यज्ञ व सत्संग का संचालन वे ही करते रहे।

अभाव खलता रहा-यहां आप सब प्रिय लोगों का जो इस कार्यक्रम में आना चाह रहे थे, जिन्होंने आने की स्वीकृति भी दे रखी थी। जिनका हम बड़ी ही बेसब्री से इन्तजार कर रहे थे। जिनको राहों में हम आंखे बिछाए बैठे थे। किन्हीं विशेष कारणों से वे न आ पाए, उनका अभाव पूरे कार्यक्रम में हमें खटकता रहा। स्मृति कक्ष को स्थापना के लिए जिन्होंने अपना अपूर्व योगदान दिया, जिनसे आश्वासन पाकर हम स्थापना करने में सफल हो पाये, जिन्होंने अवश्य-अवश्य ही इस कार्यक्रम में भाग लेने का प्रण किया हुआ था, ऐसे आदरणीय भाई सतीश अरोड़ा जी व प्रिय बहन मिनाक्षी अरोड़ा जी भी समय आने पर इस कार्यक्रम में न पहुंच सके, इसकी भी हमें बड़ी पीड़ा रही। जो लोग आए उनसे सारा का सारा कार्यक्रम रोशन हो गया था। जिन इनें गिने लोगों की यज्ञ हेतु आहुतियां आई उन से यज्ञशाला में किए गए यज्ञ से समस्त वातावरण सुवाशित हो गया। यज्ञ से तृप्त देवी-देवताओं के अमोघ आशीर्वाद भाग्य के रुप में उनके जीवन के खातों में जमा हो गए होंगें। जो समय आने पर अपना प्रभाव अवश्य ही दिखाऐंगे। यह सुनिश्चित हैं। खैर, कुछ आत्मीयजनों की अनुपस्थिति की पीड़ा को छोड़ सब मिलाकर सारा का सारा शेष कार्यक्रम बहुत ही आकर्षक, बहुत ही मनोहारी अत्यन्त सुख व भव्य रहा। इससे उत्साहित हो अब आगे पूज्य स्वामी जी महाराज का प्रिय ऋग्वेद में वर्णित **दुर्लभ शारद यज्ञ** की तैयारियों में लग गए हैं। अब हमारा अगला लक्ष्य शारद यज्ञ ही है। 26, 27, 28 सितम्बर की इन तीन तिथियों में मठ का व महर्षि दयानन्द आदर्श विद्यालय के संयुक्त रुप से आयोजित वार्षिक उत्सव के तुरन्त बाद यानि कि 29 सितम्बर के प्रात: से हम इस यज्ञ को आरम्भ करेंगे। 30 सितम्बर को इसकी पूर्णाहुति होगी। यह पूर्व सूचना आप सभी लोगों को दी जा रही है। आप लोगों में से जिन्होंने इस यज्ञ में भाग लेना हो, जिनके मन में इस यज्ञ के प्रत्यक्ष दर्शी बनने की उत्कण्ठा हो, जिनके मन में इस यज्ञ में अपने हाथों से आहुतियां समर्पित करने की तमन्ना हो अथवा न आने की स्थिति में यज्ञ की पूर्णता के लिए अपना भाग भेजने की इच्छा हो वे लोग अभी से इसकी तैयारियां शुरु कर दें। शेष जानकारी हम लोग बीच-बीच में आप लोगों को देते रहेंगें। यह दो कार्यक्रम ही हमारे जीवन के साल भर के ऐसे पड़ाव हैं जिनकी तैयारियों में तथा जिन्हें सम्पन्न करने में ही हमारे जीवन के प्रत्येक वर्ष व्यतीत हो रहे हैं। यह हमारा परम सौभाग्य है और आप सभी का भी सौभाग्य है। जिन्हें दिव्यात्माएं व परम कृपालु प्रभु हमें माध्यम बनाकर यह अनुपम अवसर दे रहे हैं। जिसके लिए हम आप लोगों को विशेष रुप से आमन्त्रित करते हैं। ईश्वर चिरकाल तक इन सौभाग्यमय अवसरों को हमें प्रदान करता रहें। दिव्यजन व दिव्यात्माएं इसके लिए हमें शक्ति व साधन देते रहें। यह प्रभु व उन दिव्यात्माओं के श्री चरणों में हमारी बार-बार प्रार्थना है। एक बार पुन: जन्मोत्सव के सफलतापूर्वक सम्पन्नता के लिए उन दिव्यजनों के साथ-साथ आप सभी का भी धन्यवाद व आभार। आप सभी को बधाई व साधुवाद।

-आचार्य महावीर सिंह, अध्यक्ष दयानन्द मठ चम्बा

आर्य समाज फील्डगंज लुधियाना में विश्व शान्ति महायज्ञ का आयोजन

आर्य समाज फील्डगंज लुधियाना के तत्वावधान में विश्व शांति महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर हवन यज्ञ में आहुतियां प्रदान करते हुये आर्यजन। जबकि चित्र दो में इस अवसर पर लुधियाना के सांसद श्री रवनीत बिट्टू भी विशेष रूप से पधारे।

गत दिनों लुधियाना के विशाल पार्क रखबाग के बहुत ही बड़े मैदान के गोल पार्क में हरी हरी घास पर खुले में आर्य समाज मंदिर फील्ड गंज लुधियाना के महामंत्री श्री रमेश सूद की अध्यक्षता में विश्व शान्ति महायज्ञ का आयोजन बहुत ही उत्साहपूर्वक एवं श्रद्धापूर्वक लगभग एक हजार के करीब श्रोताओं एवं शहर के गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति में कराया गया। पंडित राजेन्द्र जी शास्त्री ने प्रातः 7.00बजे पवित्र वेद मंत्रों के माध्यम से हवन कुंड में आहुतियां प्रदान करवाई। इसके पश्चात अपने प्रवचन में पंडित जी ने कहा कि संसार में दो प्रकार के माता-पिता होते हैं। एक वह जो अपने हाथों से सन्तान को अमृत पिलाते हैं और दूसरे वह जो अपने हाथों से सन्तान को विष पिलाते हैं। अब प्रश्न पैदा होता है कि अमृत पिलाने वाले माता-पिता कौन से हैं? जो बच्चों को बचपन से ही अच्छे संस्कार देना प्रारम्भ कर देते हैं। यदि बच्चा कोई कुचेष्टा करता है, या अनावश्यक जिद् करता है तो वह बालक को दण्ड् देने में जरा भी संकोच नहीं करते, जो अपने बच्चों की प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखते हैं, उसके द्वारा किए कार्य की समीक्षा करते हैं, ऐसे माता पिता अपनी संतानों को अमृत पिलाते हैं। उनकी संतानें फिर कुमार्ग पर नहीं जाती और सदा सुमार्ग पर चलने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं। प्रायः देखा जाता है कि वह अधिकतर परिश्रमी और पुरूषार्थी हुआ करती है और शिक्षाकाल में उन्नति की चरम सीमा पर पहुंचती हैं। ऐसी संतानें न केवल माता पिता का नाम रोशन करती हैं बल्कि देश के लिए भी उनका जीवन प्रशंसनीय होता है और वे देश के अच्छे नागरिक बनकर देश की उन्नति और तरक्की में अपना योगदान देते हैं। धन्य हैं ऐसे माता-पिता जो बच्चों के निर्माण करने में अपनी सब सुख सुविधाओं को त्याग कर अपना जीवन साधनामय बनाते हैं। ऐसे माता-पिता अपनी दिनचर्या ऐसी बनाते हैं जो संतान के लिए प्रेरणादायक बन जाती है। संतान व्यवहार की सभी बातें जैसे समय पर सोना जागना, समय पर अपने सभी कार्य सम्पन्न करना, खान-पान पर ध्यान देना आदि सभी बातें संतान पर प्रभाव ड़ालती हैं। इस समारोह में लुधियाना की भिन्न भिन्न आर्य समाजों ने विशेष रूप से भाग लिया। इस समारोह में जिला आर्य सभा लुधियाना के महामंत्री डा. विजय सरीन जी एवं प्रधान आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना, आर्य समाज किदवई नगर से श्री भरत सिंह जी परिवार सहित, साबुन बाजार से श्री सुनील शर्मा जी, श्री रणवीर शर्मा जी व कई बहिनें एवं आर्य भाइयों ने समारोह में पहुंच कर शोभा को बढ़ाया। शहर के कई आर्य समाजी परिवारों ने इस यज्ञ में अपनी आहुतियां प्रदान की। इस कार्यक्रम में पतंजलि योग समिति के सभी अधिकारियों एवं सदस्यों ने अपना पूरा पूरा सहयोग दिया जिसमें प्रमुख श्री कृष्ण लाल जी गुप्ता, जिला कार्यकारिणी के प्रमुख श्री प्रमोद शर्मा जी, श्री रविन्द्र गुप्ता जी, कुणाल वर्मा जी, पवन जी, श्री बलवीर सिंह जी, सुशील मलिक जी, जसवीर भट्टी जी, विजय मेहता जी, रवि धवन जी, हनी अग्रवाल हैं। श्रीमती पूनम मल्होत्रा जी ने सभी आए लोगों को भजनों से माध्यम से आनन्दित कर दिया। यह कार्यक्रम लगभग 2-3 घंटे तक चलता रहा। इस कार्यक्रम में लुधियाना के सांसद श्री रवनीत बिट्टू भी विशेष रूप से पधारे। लोगों ने फूल मालाएं पहना कर उनका भव्य स्वागत किया। इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये आर्य समाज फील्डगंज लुधियाना के सदस्य श्री प्रवीन सूद जी, हैप्पी खुराना जी, नीरज जी, विजय चन्देल जी,अशोक सैनी जी, राकेश सूद जी, श्रीमती गम्भीर बाला जी, श्री सुखदेव गम्भीर जी, सुनील गम्भीर जी, भारत भूषण गम्भीर जी, श्रीमती सुरेश गम्भीर जी ने अपना पूरा पूरा सहयोग दिया। इस अवसर पर श्री धवन परिवार, श्री राम कुमार जी श्री सुदर्शन सहगल जी, भंडारी साहिब, श्री रमेश जी इंजीनियर, श्री नरेन्द्र जी, रमेश सहगल जी, राकेश पराशर जी, श्रीमती पूनम मल्होत्रा जी, शाम लाल जी मल्होत्रा, श्रीमती पूनम मल्होत्रा जी इत्यादि उपस्थित थे। श्री रमेश सूद जी महामंत्री आर्य समाज फील्डगंज लुधियाना ने इस कार्यक्रम की सफलता का श्रेय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी, महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी, श्रीमती राजेश शर्मा जी उप प्रधान, श्री विजय सरीन जी को दिया।

रमेश सूद महामंत्री

जब देव दयानन्द आये थे

ले.- पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोविन्द राय आर्य एण्ड सन्ज १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता, मो. 9830135794

सोया पड़ा था सारा भारत देश हमारा,
जब देव दयानन्द आया था।
अज्ञान, पाखण्ड का छाया था अंधियारा,
जब देव दयानन्द आया था।।

बाल, वृद्ध विवाहों की थी खुली छूट,
विधवाओं की इज्जत की हो रही थी लूट।
अनाथ, असहाय, गऊ रो रही थी फूट-फूट,
चहुं ओर मच रहा था भारी हा-हा कारा।।
जब देव दयानन्द आया था...।।१।।

नारी, शूद्रों को नहीं था वेद पढ़ने का अधिकार,
पण्डे-पुजारियों का चल रहा था झूठा व्यापार।
धर्म के नाम पर, था अधर्म का प्रचार,
गर्त में जा रहा था, भारत देश हमारा।।
जब देव दयानन्द आया था...।।२।।

न था किसी को वेद-शास्त्रों का ज्ञान,
सब को अपनी उदर पूति का ही था ध्यान,
रह गया था न किसी को अपना स्वाभिमान,
हिन्दू जाति का लूट रहा था गौरव सारा,
जब देव दयानन्द आया था...।।३।।

ऋषि जी ने देश का देखा यह बेढ़ंग,
दु:खित व द्रवित हो उठा उनका अंग प्रत्यंग,
ठानी मन में करने धूर्त-पाखण्डियों से जंग,
ढूंढ़ा सद्‌गुरु विरजानन्द को अपने परिश्रम के द्वारा,
जब देव दयानन्द आया था...।।४।।

उनकी गोद में बैठ, प्राप्त किया वेदों का ज्ञान,
मिल गई कसौटी करने सत्यासत्य की पहचान,
तब चलाये वेद-विरोधियों पर तर्क बाण,
परास्त किया विरोधियों को शास्त्रार्थो के द्वारा,
जब देव दयानन्द आया था...।।५।।

फिर स्थापित की अनेक जगहों पर आर्य समाज,
जिससे बुलंद की देश भक्ति और वेदों की आवाज,
लेखराम, श्रद्धानन्द हुए शहीद, देश, धर्म के काज
आजादी मिली सैकड़ों आर्य समाजी शहीदों के द्वारा,
जब देव दयानन्द आया था...।।६।।

अब आर्य वीरों तुमको करना है यह काज
पथ-भ्रष्टों से खाली कर दो देश व समाज,
त्यागी-तपस्वी, विद्वान ही करे सब जगह राज,
कहे ''खुशहाल'' तभी आर्य बन सकेगा विश्व सारा,
जब देव दयानन्द आया था...।।७।।

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित। सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org